(गोरख पांडेय की कविता)

कानून

लोहे के पैरों में भारी बूट
कंधे से लटकती बंदूक
क़ानून अपना रास्ता पकड़ेगा
हथकड़ियां डालकर हाथों में
तमाम ताक़त से उन्हें
जेलों की ओर खींचता हुआ
गुज़रेगा विचार और श्रम के बीच से
श्रम से फल को अलग करता
रखता हुआ चीज़ों को
पहले से तय की हुई
जगहों पर
मसलन अपराधी को
न्यायाधीश की, ग़लत को सही की
और पूंजी के दलाल को
शासक की जगह पर
रखता हुआ
चलेगा
मज़दूरों पर गोली की रफ़्तार से
भूखमरी की रफ़्तार से किसानों पर
विरोध की जुबान पर
चाकू की तरह चलेगा
व्याख्या नहीं देगा
बहते हुंए ख़ून की
क़ानून व्याख्या से परे कहा जाएगा
देखते–देखते
वह हमारी निगाहों और सपनों में
ख़ौफ बनकर समा जायेगा
देश के नाम पर
जनता को गिरफ़्तार करेगा
जनता के नाम पर
बेच देगा देश
सुरक्षा के नाम पर
असुरक्षित करेगा
अगर कभी वह आधी रात को
आपका दरवाज़ा खटखटाएगा
तो फिर समझिए कि आपका
पता नहीं चल पाएगा
ख़बरों में इसे मुठभेड़ कहा जाएगा

पैदा होकर मिल्कियत की कोख से
बहसा जाएगा
संसद में और कचहरियों में
झूठ की सुनहली पालिश से
चमकाकर
तब तक लोहे के पैरों
चलाया जाएगा क़ानून
जब तक तमाम ताक़त से
तोड़ा नहीं जाएगा।

पेज 1 का शेष भाग

इस बार शिकार हुए राजनेता नक्सली हमले में

दिखावटी इसलिये क्योंकि यही सांसद और यही सरकारें बिना किसी तैयारी के सी आर पी एफ बटालियनें नक्सली क्षेत्रों में अंधा-धुंध भेजती हैं बिना उनके मरने-जीने पर ध्यान दिये। तब भी तमाम लोगों की प्रतिक्रिया यही थी कि हमले में 10-20 सांसद/मन्त्री मारे जाते तो अच्छा होता। सुरक्षाकर्मियों ने जान पर खेल कर अपना कर्त्तव्य निभाया और लोगों की पूरी सहानुभूति भी रही। पर सांसदों के साथ शायद ही आम जनता की सहानुभूति रही हो। हालांकि तब भी राष्ट्रीय मीडिया ने इस पहलू को नज़रंदाज ही किया था। राजनेताओं को तो आत्म-मंथन की जरूरत कहां महसूस होनी थी क्योंकि वे तो बिना नुक्सान सलामत रह गये थे।

यह गहराई से सोचने की बात है कि राजनेताओं की सुरक्षा को लेकर जनता में ऐसी उदासीनता क्यों है? एक तो इसलिये कि राजनेताओं का अपना चेहरा व चरित्र जनता में कोई सम्मान नहीं पैदा कर पाते। दूसरे, सुरक्षाकर्मी, जो किसानों और अन्य मेहनतकश तबकों से आते हैं, को खतरों में झोंकते समय इन राजनेताओं को जरा भी सावधानी बरतने की जरूरत महसूस नहीं होती। तीसरे, सारी नक्सल-समस्या की जड़ में वहां के लोगों का अमानवीय शोषण है, जो पूंजीपतियों एवं सरकारी अमलें द्वारा इन्हीं राजनेताओं के संरक्षण में सम्पन्न होता आया है।

नक्सली हिंसा से मिलने वाली तमाम चोटें सरकारों की अदूरदर्शी चुप्पियों/ पहलों का नतीजा है। दशकों तक कांग्रेसी, भाजपाई, क्षेत्रीय दलों की सरकारों ने नक्सली उपस्थिति एवं उनकी वृद्धि के प्रति चुप्पी रखी ताकि वहां उनकी अपनी मिलीभगत से चल रहे शोषण, विशेषकर खनिजों की खुली लूट, जंगलों का व्यावसायिक दोहन एवं बंधुआ श्रम, की ओर किसी का ध्यान न जाये। राष्ट्रीय मीडिया भी इस दौर में खामोश रहा क्योंकि उन पर या तो सीधे शोषक पूंजीपतियों का नियन्त्रण था या उन्हीं के द्वारा विज्ञापन मिलने होते थे।

सन् 2008 में चिदम्बरम के केन्द्रीय गृह-मन्त्रालय का कार्यभार संभलने पर केन्द्र सरकार ने पहल दिखानी शुरू की। तब तक और कोई चरा भी नहीं बचा था क्योंकि पानी सिर से ऊपर निकल चुका था। अपने प्रभाव क्षेत्रों में नक्सली इतने मजबूत हो गये थे कि खनिजों की सीधी लूट और जंगलों का व्यापक व्यावसायिक दोहन संभव नहीं रह गया था। पूंजीपतियों की जल्दी के चलते चिदंबरम ने आनन-फानन में नक्सली क्षेत्रों में बिना तैयारी के सी आर पी एफ भेजने का फैसला कर डाला।

बिके हुए चिदंबरम की हठधर्मिता का आलम यह था कि सन् 2008 की वार्षिक पुलिस महानिदेशक सम्मेलन में उनकी गर्वोक्ति थी: ''मै यह तो नहीं बता सकता कि नक्सलियों के विरुद्ध हमारा ऑपरेशन कब शुरू होगा, पर इतना तय है कि यह शुरू होने से दो साल में पूरी तरह नक्सलियों के सफ़ाये के साथ समाप्त हो जायेगा।'' आज इस ऑपरेशन को चलते 4 साल से ज़्यादा हो चुके हैं; सैंकड़ों की संख्या में सुरक्षाकर्मी गंवाने के बावजूद मामला जहां-का-तहां फ़ंसा खड़ा हैऔर आगे भी कोई रास्ता निकलता नज़र नहीं आ रहा। यदि भारतीय हुक्मरान लालच में अंधे न होते तो वे 10-15 वर्ष की ऐसी एकीकृत रणनीति बनाते जिसमें स्थानीय परिस्थितियों के अनुसार वहां पर रोज़गार जनित विकास एवं सुरक्षा का मॉडल तैयार करते। तब वे सुरक्षाकर्मी को पहले सामरिक तैयारियों का वक्त देते। तब वे नक्सलियों को राजनैतिक बातचीत के लिये मजबूर कर पाने की रणनीति पर चलते। आज उन्हें नक्सली क्षेत्रों में अंधाधुध घुसने का नतीजा मिल रहा है। भला जनता उदासीन क्यों न होगी!

सुविधा केन्द्र बनाम पुलिस की दुकान

सरकार के इस कदम से थाने चौकियों में रिश्वत लेने वालों को बल मिला है। अब यदि कोई फ़रियादी डबुआ, पल्ला अथवा दूर-दराज की किसी चौकी में रपट गुमशुदगी लिखाने जाता है या एफआईआर की नकल मांगता है तो उसे इसी सुविधा केन्द्र में जाने को कहा जाता है। इतनी दूर जाना उसके लिये मुसीबत से कम नहीं। अपनी इस आवागमन की मुसीबत से बचने के लिये वह सम्बन्धित चौकी को मुह मांगे पैसे वे भी बिना रसीद के देता है। कौन से कानून के तहत पुलिस विभाग यह सुविधा शुल्क वसूल कर रहा है, यह जानने के लिये पुलिस आयुक्त (सी पी) अरशिंदर सिंह चावला से फोन पर सम्पर्क करके जानना चाहा तो उन्होंने कहा कि यह तो उनके आने के पहले से ही लागू है, तभी क्यों नहीं पूछा? जरूरी नहीं कि हर बात पर तुरंत ध्यान चला जाये, उस वक्त इस पर ध्यान नहीं गया था। इस पर सी पी ने कहा कि इस सवाल का जवाब वे एकदम से तो नहीं दे सकते। वे चैक करेंगे। वे उस आदेश को भी पढेंगे जिसके तहत यह सुविधा केन्द्र बनाया गया है तथा पैसे लिये जा रहे हैं

यह भी काबिलेगौर है कि इस केन्द्र पर एक सब-इन्सपेक्टर व 4 सिपाही तैनात किये गये हैं। इनके वेतन का ही खर्चा एक लाख मासिक से कम नहीं, बाकी खर्च अलग से। एक तरफ़ तो फ़ोर्स की कमी का रोना रोया जाता है दूसरी ओर इस तरह के वाहियातपनों पर फ़ोर्स लगा रखी है। संदर्भवश, ड्राइविंग लाइसेंस का टेस्ट लेते वक्त जिला निरीक्षक कार्यालय द्वारा जो 100 रपया की पर्ची काटी जाती है वह किस कानून के तहत आती है? इस पर सी पी साहब ने फरमाया कि यह तों आफ़िशियल है और ट्रेज़री में जमा होते हैं। ''आफ़िशियल तो हैं मैं कोई इसे रिश्वत नहीं बता रहा, लेकिन यह वसूली कौन से एक्ट की कौन सी धारा के तहत हो रही है? और यदि यह पैसा ट्रेज़री में जमा हो रहा है तो कौन से हेड में जमा होता है?'' इसके जवाब में भी उन्होंने कहा कि वे इस बाबत पूछ पड़ताल करके ही कुछ बता पायेंगे।

आईपीएल के 'पवित्र' और 'पापी' एक जैसे

बड़े खिलाड़ियों को तो विज्ञापनबाज़ी एवं दर्शन देने के नाम पर बीसों, पचासों, सैंकड़ों करोड़ मिलते हैं जबकि तमाम अन्य खिलाड़ियों को कुछ भी नहीं मिलता। ऐसे में चंद गेंदें मिलीभगत से फ़ेंक कर या एकआध बार विकेट या कैच गंवा कर अगर बीसीयों या पचासों लाख बन जायें तो सौदा क्या बुरा है।

दूसरा आयाम यह कि टीम-मालिकों ने अपने सैंकड़ों करोड़ किस गरज से लगा रखे हैं। पुणे-वारियर्स के मालिक सुब्रत राय सहारा ने तो टीम 1700 करोड़ रुपया में खरीदी और मंहगे से मंहगे खिलाड़ी नीलामी में खरीदे वे अलग से। क्या इतने बड़े पैमाने पर होने वाली सट्टेबाजी में उनका हिस्सा-पत्ती नहीं होगा? दिल्ली पुलिस की जांच अभी जारी है और उसके सूत्र जिस तरह अंतर्राष्ट्रीय सरगना से जुड़ रहे हैं, कुछ टीम-मालिकों एवं किन्हीं पुराने घाघ खिलाड़ियों का शामिल होना असंभव नहीं है।

एक आयाम यह भी सामने आता है कि सारा जब शेयर बाज़ार और सारा रिएल्टी बाज़ार सट्टेबाज़ी का ही प्रतिरूप है,

अंधा धुंध पैसे ने बिगाड़ा क्रिकेट को

क्रिकेट में बढती सट्टेबाज़ी के चलते इस खेल की दुर्दशा को लेकर 'मज़दूर मोर्चा' ने जाने-माने क्रिकेटर सरकार तलवार से बातचीत की। उनके अनुसार आई पी एल को समाप्त तो नहीं लेकिन तब तक अवश्य बन्द कर दिया जाना चाहिये जब तक कि इसमें फ़ैल चुकी गंदगी को पूरी तरह से साफ़ न कर दिया जाये। लेकिन साफ़ करे कौन? साफ़ करने वाले तो खुद ही गंदगी फ़ैला रहे हैं। कभी कपिल देव के साथ क्रिकेट खेल चुके तलवार बीते ज़माने को याद करते हुए कहते हैं कि रणजी ट्रॉफ़ी का एक मैच खेलने पर जब 1000-1500 रुपये मिल जाते थे तो वे बल्लियों उछलते थे। अब करोड़ों का कोई हिसाब नहीं रह गया है। उस वक्त खेल के लिये खेला करते थे अब तो सिर्फ पैसे के लिये ही खेल रह गया है। तलवार बतातें हैं कि उनके वक्त में खेल के बाद होस्ट टीम एक समोसा व चाय से शिष्टता निभाती थी। अब तो मैच से पहले और बाद में बड़े-बड़े पंचतारा होटलों में एय्यासी पूर्ण पार्टियां चलती है कहीं बॉलीवुड का टशन है तो कहीं चीयर गर्ल्स का। इन सबके बोझ तले भद्रपुरुषों का खेल कहे जाने वाला क्रिकेट तो दबकर अपनी सांसे तोड़ रहा है। क्रिकेट के बड़े स्टार खिलाड़ियों के बारे में आपका क्या कहना है? जवाब में उन्होंने कहा कि सभी स्टार खिलाड़ी किसी न किसी टीम से किसी न किसी रूप में जुड़े हैं। इन में से कौन सट्टेबाजी में शामिल है और कौन नही, कहना मुश्किल है; लेकिन इतना तो तय है कि उनसे छिपा हुआ भी कुछ नहीं है।

सरकारी लाटरियां, चिट फंड, रेसकोर्स भी जुए और सट्टे के केन्द्र हैं। ऐसे में इसी तरह के आसान पैसा दिलाने वाले क्रिकेट और आइ पी एल को सट्टेबाज़ी से दूर कैसे रखा जा सकता है।

तमाम विकासशील देशों ने लोक-प्रिय खेलों में सट्टेबाज़ी का आसान निदान निकाला कि इसे कानूनी मान्यता प्रदान कर दी।

'श्रीसन्त, चन्दीला व अंकित चव्हाण सट्टेबाजी में गिरफ़्तार'

वे हमारे खेल के अनुसार हमारी नीलामी करें, हमारी बोली लगायें, खरीदें बेचें तो ठीक और हम स्वयं सट्टेबाजों से अपनी बोली लगवायें कि हम कैसा खेलें तो वो कितने पैसे देंगे-वो गलत उनका पैसे कमाना खेल है और हम कमायें तो सट्टेबाजी। धन्य हो भारतीय गणतंत्र!

इससे सरकारों को भारी टैक्स मिलने लगा, इस कारोबार में लगने और पैदा होने वाला काला धन बेलगाम नहीं रहा और स्पॉट-फ़िक्सिंग जैसी बदमाशियां जिनमें आज खिलाड़ी शामिल होते हैं, उनको दंडनीय बना दिया गया। इसी लिये इंगलैंड की एक अदालत ने 3 पाकिस्तानी टेस्ट खिलाड़ियों को कारावास की सज़ायें दी थीं।

पर इन आयामों पर ध्यान देने की किसी को ज़रूरत महसूस नहीं हो रही। डर यह है कि मामला रंगे हाथ पकड़े गये चंद खिलाड़ियों व सटोरियों तक ही सीमित न रह जाये। पहले भी दोषी पाये गये अज़हरुद्दीन, अजय जडेजा, मनोज प्रभाकर जैसों को पुनर्स्थापित किया जा चुका है। तब भी जांच सटोरियों से आगे नहीं बढाई गयी थी। कहने को भारतीय क्रिकेट बोर्ड ने एक पूर्व आई पी एस अधिकारी रवि सवानी के नेतृत्व में भ्रष्टाचार विरोधी पूरा दस्ता बना रखा है। पर यह दस्ता बोर्ड का मतलब ही हल करता है। अन्यथा इसे और बोर्ड को आज का काला दिन न देखना पड़ता। यह भी दिलचस्प है कि नरेंद्र मोदी (अध्यक्ष गुजरात क्रिकेट संघ), अरुण जेटली (अध्यक्ष दिल्ली क्रिकेट संघ), लालू यादव (अध्यक्ष बिहार क्रिकेट संघ), शरद पवार (अध्यक्ष अन्तर्राष्ट्रीय क्रिकेट संघ)जैसे बडे राजनीतिज्ञ बस दबी जबान से एक-आध बार बोलकर चुप्पी साध गये हैं। बोले भी क्या, वे भी तो शॉमिल हैं-अन्यथा इस भांडे के अब बीच चौराहे पर फूटने से पहले भी बोल सकते थे।

असली जालसाजों को कब रगाड़ा जायेगा?

ज़ाहिर है इस दौरान न पुलिस और न मिडिया के पास वक्त है कि वे जनता की आम परेशानियों पर भी ध्यान दें। दिल्ली और मुंबई पुलिस में यदि आम नागरिक से सम्मान पाने की इच्छा है तो उन्हें अपना ध्यान तुरन्त इस तमाशे से हटा कर वास्तविक अपराध एवं उत्पीड़न पर केन्द्रित करना चाहिये। उन्हें चाहिये कि वे नागरिकों के नाम एक श्वेतपत्र निकालें जिसमें इस बात का खुलासा करें कि कैसे भारतीय क्रिकेट बोर्ड आई पी एल और सटोरिये एवं बड़े क्रिकेट खिलाड़ी मिलकर उन्हें क्रिकेट के नाम पर धोखाधड़ी परोस रहे हैं। साथ ही भारतीय दंड संहिता की जालसाजी एवं धोखाधड़ी जैसी गंभीर धारायें उक्त अपराधी समूह के विरुद्ध लगाई जानी चाहिये न कि छोटे-मोटे सटोरियों एवं उनके जाल में फ़ंसे खिलाड़ियों के विरुद्ध।